सरकारी सेवाओं से मातृभाषाओं की बिदाई

यूपी बोर्ड की परीक्षा में आठ लाख विद्यार्थियों का हिन्दी में फेल होने का समाचार 2020 में सुर्खियों में था. कुछ दिन बाद जब यूपीपीएससी का रेजल्ट आया तो उसमें भी दो तिहाई से अधिक अंग्रेजी माध्यम के अभ्यर्थी सफल हुए. यह संख्या पहले 20-25 प्रतिशत के आस-पास रहती थी. सितंबर 2020 में जब यूपीपीएससी का परिणाम आया तो उसके दूसरे दिन प्रयागराज के एक प्रतिभाशाली छात्र राजीव पटेल ने निराशा और दबाव में आकर आत्महत्या कर ली. उसके बाद से हिन्दी माध्यम के परीक्षार्थी अपनी माँगों को लेकर प्रयागराज की सड़कों पर महीनों आन्दोलन करते रहे. 2020 का यूपीएससी का रेजल्ट भी ऐतिहासिक और अभूतपूर्व था. हिन्दी माध्यम वाले सफल अभ्यर्थियों की संख्या सिर्फ तीन प्रतिशत रह गई. 97% अभ्यर्थी अंग्रेजी माध्यम वाले सफल हुए. मैने समस्या की तह में जाने की कोशिश की तो सिर घूम गया.

देश में अराजपत्रित कर्मचारियों के चयन के लिए कर्मचारी चयन आयोग (स्टाफ सलेक्शन कमीशन) सबसे बड़ा संगठन है. इस संगठन की परीक्षाओं से हिन्दी को पूरी तरह बाहर का रास्ता दिखाया जा चुका है. मैंने उसकी वेबसाइट पर जाकर देखा, अध्ययन किया तो सकते में आ गया. कंबाइंड ग्रेजुएट लेबल की परीक्षा जो तीन सोपानों में आयोजित होती है, उसके प्रत्येक सोपान में क्रमश : इंग्लिश कंप्रीहेंशन, इंग्लिश लैंग्वेज एण्ड कंप्रीहेंशन तथा डेस्क्रिप्टिव पेपर इन इंग्लिश ऑर हिन्दी है. प्रश्न यह है कि जब आरंभिक दो सोपानों में इंग्लिश लैंग्वेज एण्ड कंप्रीहेंशन अनिवार्य है तो तीसरे सोपान में भला हिन्दी का विकल्प कोई क्यों और कैसे चुन सकता है ? जाहिर है यहाँ हिन्दी का उल्लेख केवल नाम के लिए है.

कंबाइंड हायर सेकेंडरी लेबल की परीक्षा में इंग्लिश लैंग्वेज का प्रश्नपत्र है किन्तु हिन्दी का कुछ भी नहीं है. स्टेनोग्राफर्स (ग्रेड 'सी' एण्ड 'डी') के लिए 200 अंकों की परीक्षा में इंग्लिश लैंग्वेज एण्ड कंप्रीहेंशन 100 अंकों का है किन्तु हिन्दी को पूरी तरह हटा लिया गया है. जूनियर इंजीनियर्स की परीक्षा में हिन्दी का नामोनिशान नहीं है. सब इंस्पेक्टर्स (दिल्ली पुलिस, सीएपीएफ तथा सीआईएसएफ) की परीक्षा दो भाग में होती है. इसके पहले भाग में 50 अंकों का इंग्लिश कंप्रीहेंशन तो है ही, दूसरे भाग में भी 200 अंकों का सिर्फ इंग्लिश लैंग्वेज एण्ड कंप्रीहेंशन है. विभिन्न राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में मल्टी टास्किंग (नान टेक्निकल) स्टाफ के लिए भी दो भागों में बँटी परीक्षा के पहले भाग में जनरल इंग्लिश है और दूसरे भाग में शार्ट एस्से एण्ड इंग्लिश लेटर राइटिंग है. आयोग ने मान लिया है कि हिन्दी में कुछ भी लिखने की कभी जरूरत नहीं पड़ेगी. इसीलिए हिन्दी के किसी स्तर के ज्ञान की परीक्षा का कोई प्रावधान नहीं है. यह सब देखने के बाद कहा जा सकता हैं कि देश की अराजपत्रित

सरकारी नौकरियों के लिए अब हर स्तर पर सिर्फ अंग्रेजी को स्थापित कर दिया गया है और हिन्दी को पूरी तरह बाहर का रास्ता दिखा दिया गया है.

राजपत्रित अधिकारियों के चयन के लिए संघ लोक सेवा आयोग तथा विभिन्न राज्यों के लोक सेवा आयोग हैं. संघ लोक सेवा आयोग का गठन अंग्रेजों ने 1926 में किया था. अंग्रेजों के जमाने में यहाँ परीक्षाओं का माध्यम सिर्फ अंग्रेजी थीं. आजादी के बाद 1950 में इस परीक्षा के लिए सिर्फ तीन हजार प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया था और 1970 में यह संख्या बढ़कर ग्यारह हजार हुई थी. 1979 में कोठारी समिति के सुझाव लागू हुए जिसने संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल सभी भाषाओं में परीक्षा देने की संस्तुति की थी. इससे देश के दूर दराज के गाँवों में दबी प्रतिभाओं को भी अपनी भाषा में परीक्षा देने के अवसर उपलब्ध हुए. परिणाम यह हुआ कि 1979 में परीक्षा देने वालों की संख्या एकाएक बढ़कर एक लाख दस हजार हो गई.

अब हर साल गाँवों के गरीबों के बच्चों की भी एकाध तस्वीरें अखबारों में अवश्य देखने को मिल जाती थीं जिनका चयन इस प्रतिष्ठित सेवा में हो जाता था. शीर्ष पर बैठे हमारे नीति नियामकों को यह बर्दाश्त नहीं हुआ. उन्होंने 2011 में वैकल्पिक विषय को हटाकर उसकी जगह 200 अंकों का सीसैट (सिविल सर्विस एप्टीटचूट टेस्ट) लागू किया जिसमें मुख्य जोर अंग्रेजी पर था. इससे हिन्दी माध्यम वाले परीक्षार्थियों की संख्या तेजी से घटी. इसका राष्ट्र व्यापी विरोध हुआ. दिल्ली हाईकोर्ट ने भी आन्दोलनकारियों के पक्ष में अपेक्षित निर्देश दिए, तब जाकर 2014 में आयोग ने कुछ बदलाव किए. किन्तु इसके बाद धीरे- धीरे आयोग ने सीसैट सहित यूपीएससी परीक्षा के नियमों में दूसरे अनेक ऐसे परिवर्तन किए जिससे हिन्दी माध्यम के अभ्यर्थियों के लिए प्रारंभिक परीक्षा पास करना भी कठिन होता गया. 2009 में हिन्दी माध्यम से जहाँ 25.4 प्रतिशत परीक्षार्थी सफल हुए थे वहाँ 2019 में यह संख्या घटकर मात्र 3 प्रतिशत रह गई. पहले जहाँ टॉप टेन सफल अभ्यर्थियों में तीन-चार हिन्दी माध्यम वाले अवश्य रहते थे वहाँ 2019 में चयनित कुल 829 अभ्यर्थियों में हिन्दी माध्यम वाले चयनित अभ्यर्थियों में पहले अभ्यर्थी का स्थान 317वाँ है.

तीन स्तरों पर होने वाली संघ लोक सेवा आयोग की इस सर्वाधिक प्रतिष्ठित परीक्षा में हिन्दी माध्यम वालों को अमूमन प्रारंभिक परीक्षा में ही छाँट दिया जाता है. मुख्य परीक्षा की तैयारी के लिए भी न तो उन्हें स्तरीय पाठ्य-सामग्री सुलभ है और न बेहतर कोचिंग की सुविधा क्योंकि आर्थिक दृष्टि से भी वे कमजोर होते हैं. ग्रामीण पृष्ठभूमि के ऐसे अभ्यर्थी ज्यादातर मानविकी के विषय चुनते हैं. तकनीकी विषय चुनने वाले अभ्यर्थियों की तुलना में स्वाभाविक रूप से उन्हें कम अंक मिलते हैं. साक्षात्कार में भी हिन्दी माध्यम वालों के साथ भेदभाव किया जाता है. साक्षात्कार के समय अमूमन उनसे पूछा जाता है कि वे हिन्दी में साक्षात्कार देंगे या अंग्रेजी में, जबकि वे अपने आवेदन पत्र में पहले ही हिन्दी माध्यम का विकल्प चुनकर उन्हें अवगत करा चुके होते हैं. हिन्दी माध्यम वाले अभ्यर्थियों को मिलने वाले प्रश्नों के हिन्दी अनुवाद देखकर तो कोई भी समझदार व्यक्ति सिर पीट लेगा. कुछ बानगी आप भी देखिए,

“भारत में संविधान के संदर्भ में, सामान्य विधियों में अंतर्विस्ट प्रतिषेध अथवा निर्बंधन अथवा उपबंध अनुच्छेद-142 के अधीन सांविधानिक शक्तियों पर प्रतिरोध अथवा निर्बंधन की तरह कार्य नहीं कर

सकते."

एक दूसरा वाक्य है, "वार्महोल से होते हुए अंतरा-मंदाकिनीय अंतरिक्ष यात्रा की संभावना की पुष्टि हुई." (डॉ. विजय अग्रवाल द्वारा उद्धृत)

प्रश्न निर्माताओं ने सर्जिकल स्ट्राइक के लिए 'शल्यक प्रहार', डिजिटलीकरण के लिए 'अंकीयकृत', साइंटिस्ट आब्जर्ब्ड के लिए 'वैज्ञानिकों ने प्रेक्षण किया', स्टील प्लांट के लिए 'इस्पात का पौधा', डेलिवरी के लिए 'परिदान', सिविल डिसओबिडिएंस मूवमेंट के लिए 'असहयोग आन्दोलन' आदि किया है. इनमें डेलिवरी के लिए 'वितरण' तथा डिसओबिडिएँस मूवमेंट के लिए 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' तो बेहद प्रचलित शब्द हैं. इन्हें भी गलत लिखना प्रमाणित करता है कि हिन्दी अनुवाद को गंभीरता से नहीं लिया जाता.

अमूमन सहज ही कह दिया जाता है कि जिन्हें हिन्दी अनुवाद समझ में नहीं आता है उनके लिए मूल अंग्रेजी तो रहता ही है. किन्तु यहाँ समझने की बात यह है कि यूपीएससी की प्रारंभिक परीक्षा में छ : से सात लाख परीक्षार्थी शामिल होते हैं और उनमें से लगभग तेरह प्रतिशत परीक्षार्थी ही मुख्य परीक्षा के लिए अपनी अर्हता प्रमाणित कर पाते हैं. ऐसी दशा में 0.01 प्रतिशत अंक का भी महत्व होता है. परीक्षार्थियों को निर्धारित समय सीमा के भीतर ही लिखना होता है. ऐसी दशा में हिन्दी माध्यम का परीक्षार्थी यदि प्रश्न को समझने के लिए अंग्रेजी मूल भी देखने लगा और ऐसे पाँच प्रश्न भी पढ़ने पड़े तो उसका पिछड़ना तय है. किन्तु प्रतिवर्ष औसतन ऐसे दस प्रश्न अवश्य होते हैं. यही कारण है कि हिन्दी माध्यम वाले परीक्षार्थी आम तौर पर प्रारंभिक परीक्षा में ही बाहर हो जाते हैं.

प्रश्न यह है कि देश के लोक सेवकों को कितनी अंग्रेजी चाहिए ? उन्हें इस देश के लोक से संपर्क करने के लिए हिन्दी सीखनी जरूरी है या अंग्रेजी ? उन्हें जनता के सामने अंग्रेजी झाड़कर उनपर रोब जमाना है या उन्हें समझा बुझाकर उनसे आत्मीय संबंध जोड़ना और उनकी सेवा करना ? उनके साक्षात्कार अंग्रेजी माध्यम से क्यों लिए जाते हैं ? क्या उन्हें इंग्लैंड में सेवा देनी है ? इस देश के सबसे बड़े पद तो राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री और गृहमंत्री के है. इन पदों पर बैठे लोगों का काम तो हिन्दी और गुजराती बोलने से चल जाता है और इस देश की जनता बार- बार उन्हें वोट देकर उनके कुशल प्रशासन पर अपनी स्वीकृति की मुहर भी लगा देती है. हिन्दी माध्यम के अपने बैच के टापर निशांत जैन ने अपना अनुभव बाँटते हुए कहा है कि हिन्दी माध्यम वाले आईएएस अधिकारी अंग्रेजी माध्यम वालों की तुलना में जनता के प्रति अधिक संवेदनशील देखे गए हैं. ऐसे लोक सेवकों को लोक सेवा का अधिकार क्यों मिलना चाहिए जो लोक की भाषा में बोल पाने में भी अक्षम हों ?

न्याय के क्षेत्र की दशा यह है कि आज हमारे देश में सुप्रीम कोर्ट से लेकर 25 में से 21 हाई कोर्टों में हिन्दी सहित किसी भी भारतीय भाषा का प्रयोग नहीं होता है. मुवक्किल को पता ही नहीं होता कि वकील और जज उसके केस के बारे में क्या सवाल- जवाब कर रहे हैं. उसे अपने बारे में मिले फैसले को समझने के लिए भी वकील के पास जाना पड़ता है और उसके लिए भी उसे पैसे देने पड़ते हैं.

सरकारी नौकरियों, प्रशासन और न्याय व्यवस्था में अंग्रेजी के वर्चस्व के लिए क्या जनता जिम्मेदार है या सरकार और उसकी नीतियाँ ? आज जब शिक्षा को व्यापार और मुनाफे के लिए ज्यादातर निजी क्षेत्र

के हवाले कर दिया गया है, देश की अधिकाँश राज्य सरकारों ने सरकारी विद्यालयों को भी अंग्रेजी माध्यम में बदल दिया है और हमारे नौनिहालों से उनकी मातृभाषाएँ क्रूरतापूर्वक छीन ली हैं. केन्द्रीय विद्यालयों और नवोदय विद्यालयों में भी ऐसी व्यवस्था कर दी गई है कि बच्चों की हिन्दी आठवीं -नवीं के बाद ही छूट जाती है. उनके तर्क हैं कि अभिभावकों की यही माँग है. प्रश्न यह है कि जब अफसर से लेकर चपरासी तक की सभी नौकरियाँ अंग्रेजी के बलपर ही मिलेंगी तो कोई अपने बच्चे को हिन्दी पढ़ाने की मूर्खता कैसे करेगा ? निस्संदेह हिन्दी पढ़ने से नौकरी मिलने लगे तो लोग हिन्दी पढ़ाएँगे. यूपी बोर्ड में आठ लाख बच्चों के फेल होने की खबर तो सुर्खियों में थी और सारा दोष शिक्षकों पर डाला जा रहा था किन्तु इस ओर ध्यान नहीं था कि अंग्रेजी की शब्दावली और व्याकरण रटने में ही जब बच्चों का सारा समय चला जाएगा तो अपने घर की भाषा हिन्दी पढ़ने के लिए वे कैसे समय निकाल पाएँगे ? अब तो लोग अंग्रेजी को एक भाषा नहीं बल्कि ज्ञान का पर्याय मानने लगे हैं.

इस देश में तकनीकी, मेडिकल, मैनेजमेंट, कानून आदि की शिक्षा तो अंग्रेजी माध्यम से होती ही है राजधानी के विश्वविद्यालयों में मानविकी और सामाजिक विज्ञान की शिक्षा भी अंग्रेजी माध्यम से होने लगी है जबकि पढ़ाने वाले अध्यापक ज्यादातर हिन्दी पट्टी के ही हैं. इन सबके पीछे अंग्रेजी का दिनोंदिन बढ़ता रुतबा है जिसके लिए सिर्फ सरकारें जिम्मेदार हैं.

हाल ही में प्रकाशित अपनी पुस्तक “द इंग्लिश मीडियम मिथ” में संक्रान्त सानु ने प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद के आधार पर दुनिया के सबसे अमीर और सबसे गरीब, बीस -बीस देशों की सूची दी है. बीस सबसे अमीर देशों के नाम हैं, क्रमश : स्विट्जरलैंड, डेनमार्क, जापान, अमेरिका, स्वीडेन, जर्मनी, आस्ट्रिया, नीदरलैंड, फिनलैंड, बेल्जियम, फ्रांस, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, इटली, कनाडा, इजराइल, स्पेन, ग्रीस, पुर्तगाल और साउथ कोरिया. इन सभी देशों में उन देशों की जनभाषा ही सरकारी कामकाज की भी भाषा है और शिक्षा के माध्यम की भी.

इसके साथ ही उन्होंने दुनिया के सबसे गरीब बीस देशों की भी सूची दी है. इस सूची में शामिल हैं क्रमश : कांगो, इथियोपिया, बुरुंडी, सीरा लियोन, मालावी, निगेर, चाड, मोजाम्बीक, नेपाल, माली, बुरुकिना फैसो, रवान्डा, मेडागास्कर, कंबोडिया, तंजानिया, नाइजीरिया, अंगोला, लाओस, टोगो और उगान्डा. इनमें से सिर्फ एक देश नेपाल है जहां जनभाषा, शिक्षा के माध्यम की भाषा और सरकारी कामकाज की भाषा एक ही है नेपाली. बाकी उन्नीस देशों में राजकाज की भाषा और शिक्षा के माध्यम की भाषा भारत की तरह जनता की भाषा से भिन्न कोई न कोई विदेशी भाषा है. (द्रष्टव्य, द इंग्लिश मीडियम मिथ, पृष्ठ-12-13) इस उदाहरण से आसानी से समझा जा सकता है कि अंग्रेजी माध्यम हमारे देश के विकास में कितनी बड़ी बाधा है.

वास्तव में व्यक्ति चाहे जितनी भी भाषाएँ सीख ले किन्तु वह सोचता अपनी भाषा में ही है. हमारे बच्चे दूसरे की भाषा में पढ़ते हैं फिर उसे अपनी भाषा में सोचने के लिए अनूदित करते हैं और लिखने के लिए फिर उन्हें दूसरे की भाषा में ट्रांसलेट करना पड़ता है. इस तरह हमारे बच्चों के जीवन का एक बड़ा हिस्सा दूसरे की भाषा सीखने में चला जाता है. इसीलिए मौलिक चिन्तन नहीं हो पाता. मौलिक चिन्तन सिर्फ अपनी भाषा में ही हो सकता है. पराई भाषा में हम सिर्फ नकलची पैदा कर सकते हैं. अंग्रेजी माध्यम वाली शिक्षा सिर्फ नकलची पैदा कर रही है.

हमें स्मरण रखना चाहिए कि हम अपने जिस अतीत पर मुग्ध हैं उस अतीत की सारी उपलब्धियाँ अपनी भाषाओं में अध्ययन करने का परिणाम थीं. और आज भी यदि कुछ मौलिक अर्जित करना है तो अपनी भाषाओं को अपनाना ही पड़ेगा.

आज भी इस देश की सत्तर प्रतिशत जनता गावों में ही रहती है. उनकी शिक्षा ग्रामीण परिवेश की शिक्षण संस्थाओं में ही होती है. गाँवो की इन प्रतिभाओं को यदि मुख्य धारा में लाना है तो उन्हें उनकी अपनी भाषाओं में शिक्षा देना एकमात्र रास्ता है और यही हमारे संविधान का भी संकल्प है. हमारा संविधान, देश के प्रत्येक नागरिक को अवसर की समानता का अधिकार देता है.

अंत में मैं जोर देकर कहना चाहूँगा कि अंग्रेजी इस देश में सिर्फ एक विषय के रूप में पढ़ाई जानी चाहिए माध्यम के रूप में नहीं. माध्यम के रूप में किसी भी स्तर पर नहीं. इसके साथ ही नौकरियों में अंग्रेजी की जगह हमारी मातृभाषाओं को वरीयता मिलनी चाहिए.

('न्यूजट्रैक' में प्रकाशित लेख का संशोधित रूप)

(लेखक कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर और हिन्दी विभागाध्यक्ष)
amarnath.cu@gmail.com

साभार वैश्विक हिंदी सम्मेलन, मुंबई से
vaishwikhindisammelan@gmail.com